ख़ुदा की ग़ुलामी
इंसान की बुलन्दी

मौलाना सैयद जलालुद्दीन उमरी

अनुवाद

डॉ० मुहम्मद अब्दुर्रशीद (नागपुर)

पुनरीक्षण

सनाउल्लाह

विषय सूची

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अल्लाह, कृपाशील दयावान के नाम से)

प्रस्तावना

मेरा एक लेख "मानव जाति की बुलन्दी" (इब्ने-आदम की मेराज) मासिक ज़िन्दगी (उर्दू) रामपुर (यू. पी.) जुलाई 1966 ई० के अंक में प्रकाशित हुआ था। एक और लेख का शीर्षक था "ख़ुदा की ग़ुलामी", यह सितम्बर 1972 ई० के अंक में छपा। इंसान के सामने हमेशा से एक बड़ा प्रश्न यह रहा है कि इस विशाल विश्व में उसकी वास्तविक स्थिति क्या है? इसी प्रश्न के जवाब पर मानव जीवन के बारे में उभरने वाले सभी प्रश्नों के उत्तर निर्भर करते हैं। इन लेखों में इंसान की असल हैसियत को स्पष्ट किया गया है। इसके लिए क़ुरआन मजीद को बुनियाद बनाया गया है। प्रसंगवश प्राचीन और नवीन विचारधाराओं का सर्वेक्षण भी आ गया है। विवेचन-शैली तार्किक या दार्शनिक नहीं बल्कि आह्वानपरक और भावात्मक है। इसी में क़ुरआन मजीद की दलीलों को पिरोने की कोशिश की गई है कभी-कभी ख़याल आता था कि इन लेखों को पुस्तिका के रूप में प्रकाशित कर दिया जाए, जिन पाठकों की नज़र से ये लेख गुज़रे, उनमें से कुछ की यही मांग भी थी, लेकिन समय बीतता रहा और अब एक लम्बे अर्से के बाद इसकी नौबत आई है।

भाई डॉक्टर रज़ी-उल-इस्लाम नदवी को ख़ुदा अच्छा बदला दे कि उन्होंने मेरी दरख़ास्त पर इन दोनों लेखों को जोड़कर एक क्रमबद्ध लेख का रूप दे दिया और उन पर शीर्षक लगा दिया। मैंने उन पर एक नज़र डालकर कहीं-कहीं शाब्दिक संशोधन भी किया है और दो एक

जगहों पर परिवर्तन तथा परिवर्धन भी किया है। दुआ है कि इस्लाम की आह्वानपरक धारणा को समझने में यह पुस्तिका सहायक सिद्ध हो, इसे लोकप्रियता प्राप्त हो और ख़ुदा के बंदों को इससे ज़्यादा से ज़्यादा लाभ पहुँचे।

यह पुस्तिका कई साल पहले उर्दू में प्रकाशित हुई थी। अब यह पुनरीक्षण के बाद पहले से बेहतर रूप में प्रकाशित हो रही है। ख़ुशी है कि तेलगू और मराठी में भी इसका अनुवाद सामने आ चुका है। दुआ है कि ख़ुदा इसकी उपयोगिता की सीमाओं में अभिवृद्धि करे और इन कोशिशों को क़बूल फ़रमाए।

जलालुद्दीन उमरी

4 फ़रवरी 2006 ई०

ख़ुदा की ग़ुलामी : इंसान की बुलन्दी

इंसान ख़ुदा का ग़ुलाम है, लेकिन उसको आज़ाद पैदा किया गया है। क्योंकि ख़ुदा चाहता है कि वह अपनी ख़ुशी से उसकी ग़ुलामी में आ जाए, लेकिन खेद है कि ख़ुदा की दी हुई आज़ादी ने इंसान को उसका अवज्ञाकारी बना दिया है। इस ब्रह्मांड में एक ख़ुदा ही उसका वास्तविक पूज्य है, लेकिन उसने अनगिनत पूज्य बना रखे हैं।

कभी तो वह अपने ख़ुदा की आराधना (इबादत) करता है और आज्ञापालन भी। कभी सिर्फ़ आराधना करता है और आज्ञापालन नहीं करता और कभी आराधना नहीं करता, सिर्फ़ आज्ञापालन करता है। इस्लाम यह बताने के लिए आया है कि आराधना भी ख़ुदा ही की की जाए और हुक्म भी उसी का माना जाए। यही उसका बंदा और दास होने के लिए ज़रूरी है और इसी से उसकी इबादत और बंदगी पूर्ण होती है।

यह एक हक़ीक़त है कि ख़ुदा हम सब का बादशाह और हाकिम है और हम उसके ग़ुलाम हैं और ये दोनों ही चीज़ें शाश्वत हैं। हम दुनिया में आने से पहले भी उसके ग़ुलाम थे और दुनिया में आने के बाद भी उसके ग़ुलाम हैं और यहाँ से जाने के बाद भी उसके ग़ुलाम ही रहेंगे। उसका शासन हम पर हमेशा से है और हमेशा रहेगा। इसलिए स्पष्ट बात है कि हमें न तो आज़ादी और ख़ुदमख़्तारी की ज़िंदगी गुज़ारने का हक़ है और न हम ख़ुदा को छोड़कर किसी दूसरे की आज्ञाकारिता और ग़ुलामी अपना सकते हैं।

आज के युग के इंसान का रवैया

आज्ञापालन और बंदगी की यह धारणा आधुनिक युग के इंसान वे लिए भारी बोझ है। वह किसी भी क़ीमत पर इसे स्वीकार करना नर्ह चाहता। अतएव इसी का परिणाम है कि आज हर तरफ़ ख़ुदा रं बग़ावत फूट पड़ी है और कहीं उसकी प्रसन्नता पूरी होती दिखाई नर्ह देती। ख़ुदा के राज्य में ख़ुदा से बग़ावत सर्वथा ज़ुल्म और अन्याय है लेकिन इंसान ज़ुल्म व अत्याचार का यह कर्म लगातार कर रहा है इंसान के लिए सही रवैया ख़ुदा की आज्ञाकारिता है, लेकिन यही रवैय उसके लिए सबसे ज़्यादा अप्रिय है। वह ख़ुदा का बंदा और ग़ुलाम होने के बावजूद उसकी बंदगी और ग़ुलामी के लिए बिलकुल तैयार नहीं है वह न ख़ुदा है और न ख़ुदा हो सकता है, लेकिन ख़ुदाई का घमंड उसके दिमाग़ पर सवार है। वह समझता है कि सारी दुनिया का वही स्वामी है और नहीं है तो उसको स्वामी होना चाहिए। वह इस तरह अपने प्रयास और कोशिश में लगा हुआ है मानो अपनी ज़िंदगी का ख़ुद मालिक है। वह अपने जैसे इंसानों से जिन समस्याओं पर बातचीत करता है, जिन कामों में दिलचस्पी लेता है और जिन उद्देश्यों के लिए दौड़-धूप करता है, उससे साफ़ प्रकट है कि वह ख़ुदा की ग़ुलामी से निकल चुका है और उस समय तक चैन से बैठना नहीं चाहता जब तक कि ख़ुदाई का पद न प्राप्त कर ले। वह सुबह को अपने बिस्तर से उठता है तो इस निर्णय के साथ उठता है कि उसका कोई ख़ुदा नहीं है जो उससे उसके शाम तक होने वाले क्रिया-कलापों का हिसाब ले और फिर रात को वह इस लापरवाही के साथ अपने बिस्तर पर चला जाता है कि मानो दिन भर उसने जो कुछ किया, ठीक किया। उसको कभी यह ख़याल तक नहीं आता कि उसकी जान ख़ुदा की मुट्ठी में है। वह किसी भी समय उसको अपने दरबार में खींचकर हाज़िर कर सकता है।

फिर उस समय वह अपने क्रिया-कलापों का क्या जवाब देगा? इंसान खुश है कि उसके पाँव में ग़ुलामी की ज़ंजीर नहीं है। हालांकि हर पल उस पर ख़ुदा का क़ब्ज़ा है। इंसान बहुत ज़्यादा बेबस और कमज़ोर है। उसके अंदर यह ताक़त नहीं है कि ज़मीन व आसमानवाले ख़ुदा से टक्कर ले सके। क्या इंसान इस वास्तविकता को भूल चुका है कि ख़ुदा से बग़ावत कभी कामयाब नहीं हुई और जो ख़ुदा के मुक़ाबले में आया वह पीस दिया गया।

> "तो क्या बस्तीवालों को इसका डर नहीं रहा कि उन पर हमारा अज़ाब रातों रात आ जाए जबकि वे सो रहे हों? या बस्तीवालों को इस का डर नहीं है कि उन पर हमारा अज़ाब दिन में आ जाए जबकि वे खेलकूद में लगे हुए हों? क्या वे ख़ुदा की चाल से निर्भीक हैं हालांकि ख़ुदा की चाल से तबाह व बर्बाद होनेवाले ही निर्भीक होते हैं।" (क़ुरआन, 7 : 97-99)

पूरा जगत ख़ुदा की ग़ुलामी में है

जगत की एक-एक चीज़ जिस ख़ुदा के आदेश के अधीन है इंसान उसी के विरोध में खड़ा हुआ है। पेड़ के पत्ते जिसकी मर्ज़ी व आज्ञा के बिना हिल नहीं सकते, इंसान उसी की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ काम कर रहा है। पहाड़ जिसके डर से अपनी जगह जमे हुए हैं, इंसान का दिल उसी के ख़ौफ़ से ख़ाली है। जिसके इशारे से समुद्र का उफान रुक जाता और जंगल की सरसराहट समाप्त हो जाती है, इंसान उसी के आदेशों का उल्लंघन करता फिर रहा है। यह किस तरह का आश्चर्यजनक दुस्साहस है कि ज़मीन व आसमान पर जिस ख़ुदा की हुकूमत और शासन है, इंसान उसी की ग़ुलामी में रहना नहीं चाहता। नासमझ और मूर्ख इंसान! तू कहाँ ख़ुदा से भाग सकता है, जबकि तेरा पूरा अस्तित्व

ख़ुदा के बनाए हुए क़ानून के अधीन है। तू ख़ुदा से बग़ावत कर रहा है, हालाँकि इस बग़ावत में तेरे शरीर की परछाईं तक तेरा साथ देने के लिए तैयार नहीं है। वह ख़ुदा के सामने, चाहे तू उसको पसंद करे या न करे, सजदे में झुकी हुई है और तेरे बग़ावत के रवैये को ग़लत साबित कर रही है, लेकिन अफ़सोस कि तुझे उसका एहसास तक नहीं है।

> "और ख़ुदा ही को सजदा करती हैं वे सारी चीज़ें जो आसमानों और ज़मीन में हैं स्वेच्छा से और विवशता से और सुबह व शाम उनकी परछाइयाँ भी (ख़ुदा ही को सजदा कर रही हैं)।" (क़ुरआन, 13 : 15)

इंसान के चारों ओर जगत के मालिक की सत्ता और आज्ञापालन का एलान हो रहा है। जगत के हर कोने और हर दिशा से आवाज़ आ रही है कि इंसान अपनी आज़ादी को छोड़ दे और ख़ुदा की ग़ुलामी में चला आए। क्योंकि यह जगत उसका नहीं, ख़ुदा का है। वह यहाँ की किसी भी चीज़ पर मालिकाना हक़ नहीं रखता। वह जिस हवा में सांस लेता है, भोजन का जो निवाला पेट में उतारता है, पानी के जिस घूंट से अपनी प्यास बुझाता है, इनमें से एक चीज़ का भी वह मालिक नहीं है, बल्कि ख़ुदा ही उनका पैदा करनेवाला और मालिक है। इंसाफ़ और न्याय की बात यह है कि ख़ुदा के इस जगत में उसी की मर्ज़ी पूरी होनी चाहिए। इंसान इसमें अपनी मर्ज़ी से आदेश चलाने का कोई अधिकार नहीं रखता लेकिन वह जगत को इस तरह इस्तेमाल में ला रहा है जैसे ख़ुदा उसका मालिक नहीं, बल्कि वह ख़ुद उसका मालिक है।

प्रकृति से विद्रोह

इंसान जिस माहौल में घिरा हुआ है वह सारे का सारा ख़ुदा की ग़ुलामी में व्यस्त है, लेकिन विद्रोही इंसान अपने इस माहौल से जंग कर रहा है। हवा में उड़ने वाले पक्षी, ज़मीन पर रेंगनेवाले जानवर, फूल और

पौधे, नदी और पहाड़, चाँद और सूरज, हवा और पानी हर चीज़ ख़ुदा के आज्ञापालन व बंदगी में लगी हुई है। इस जगत में कोई ऐसी जगह नहीं है, जहाँ ख़ुदा की मर्ज़ी न चल रही हो और इंसान उसका पाबन्द न हो। अगर वह ख़ुदा की ग़ुलामी में रहना नहीं चाहता तो उसको यह जगत छोड़ देना होगा और कोई ऐसी जगह ढूंढनी होगी जो ख़ुदा की हुकूमत से आज़ाद हो।

इंसान इस हक़ीक़त को भूल रहा है कि पूरी कायनात ख़ुदा के आदेश और हुकूमत के अधीन है और कहीं उसकी नाफ़रमानी नहीं हो रही है। बग़ावत का रवैया इस जगत की प्रकृति से मेल नहीं खाता। इसलिए जब इंसान ख़ुदा से विद्रोह करता है तो यहां की एक-एक चीज़ उसको अपराधी और पथभ्रष्ट समझती है और उसे नफ़रत व घृणा से देखती है। वह ख़ुदा के किसी विद्रोही को अपनी गोद में रखना नहीं चाहती, लेकिन चूंकि ख़ुदा का आदेश है कि वह हर बुरे और भले की एक निश्चित समय तक सेवा करती रहे, इसलिए उसको सहन कर रही है। जब कोई ख़ुदा का विद्रोही अपने विद्रोह के परिणामस्वरूप यहाँ नष्ट और बर्बाद होता है तो वह ख़ुश होती है कि उसके दामन का एक नापाक और अपवित्र धब्बा मिट गया है।

> "अतः नहीं रोए उन पर आसमान और ज़मीन और न उनको ढील दी गई।" (क़ुरआन, 44 : 29)

आज्ञापालन और ग़ुलामी– इंसान की मूल-प्रवृत्ति

आज्ञापालान और बंदगी इंसान की प्रवृत्ति और स्वभाव में शामिल है। वह आज़ाद होना चाहे तो भी आज़ाद नहीं हो सकता। वह ग़ुलामी पर मजबूर है। इसलिए एक मालिक की ग़ुलामी से निकल भी आता है तो दूसरे मालिक की ग़ुलामी में गिरफ़्तार हो जाता है। सवाल सिर्फ़ यह

है कि उस को किस की ग़ुलामी करनी चाहिए और किस की ग़ुलामी नहीं करनी चाहिए? इसका उचित और सही जवाब, जो इस ज़गत में उसकी हैसियत के बिलकुल अनुकूल है, यह है कि वह ख़ुदा का बंदा और ग़ुलाम है, किसी और का नहीं। इसलिए उसको ग़ुलामी की हर ज़ंजीर क़ाट देनी चाहिए और सिर्फ़ एक ख़ुदा की बंदगी और आज्ञापालन करना चाहिए। लेकिन यह एक हक़ीक़त है और बहुत ही कड़वी हक़ीक़त है कि इंसान ग़ुलामी के अनगिनत पट्टे ख़ुशी से गरदन में डाल लेता है और उस ख़ुदा को भूल जाता है जिसकी ग़ुलामी के लिए वह सचमुच पैदा हुआ है और जिस की आज्ञाकारिता और बंदगी के सिवा दूसरे की आज्ञा का पालन उसके लिए बिलकुल जाइज़ नहीं है।

ग़ुलामी के विविध रूप

इंसान ख़ुदा की ग़ुलामी से मुंह मोड़ता है तो उसकी पैदा की हुई चीज़ों के सामने सिर झुका देता है या अपने ही जैसे इंसानों की ग़ुलामी करने लगता है और अगर इससे भी उसे छुटकारा मिल जाए तो अपने मन व इच्छा का बंदा बन जाता है। हालांकि ये सारी स्थितियाँ बहुत ही ग़लत और उसके लिए तबाही लानेवाली हैं।

प्रकृति के प्रकट रूपों की ग़ुलामी

एक अकेले ख़ुदा की ग़ुलामी से निकलने के बाद इंसान ने कभी प्रकृति के दृश्यों को ख़ुदा बना लिया और बेशुमार और अनगिनत सजीव और निर्जीव चीज़ों की बंदगी में लग गया। जिस चीज़ को शक्ति और क़ुव्वत का ख़ज़ाना समझा, उसके सामने माथा टेक दिया। ज़मीन, आसमान, सूरज, चाँद, सितारे, ग्रह, पेड़, पहाड़, समुद्र किस चीज़ को उसने माबूद और ख़ुदा नहीं समझा और किस-किस के सामने उसने अपनी बंदगी के माथे को झुका नहीं दिया? हालांकि इंसान ख़ुदा के

सामने अपना सर झुकाए या न झुकाए, दुनिया की हर चीज़ उसके सामने सर झुकाए खड़ी है। इंसान इस दुनिया में अपनी अस्ल हैसियत खो चुका है। लेकिन इंसान के सिवा हर चीज़ अपनी असूल हैसियत पर मौजूद है। वह पूरी तरह खुदा की गुलामी में लगी हुई है। इंसान के वश में नहीं है कि उसकी इस इस हैसियत को बदल दे। वह जिस चीज़ को भी खुदा समझकर सजदा करना चाहता है वह पुकार उठती है कि मुझे बंदगी की जगह से निकालकर खुदाई की जगह पर न पहुँचाओ। यह मेरी और तुम्हारी दोनों की ग़लत हैसियत होगी। न मैं खुदा हूँ और न तुम मेरे ग़ुलाम। इस जगत पर जिस खुदा की हुकूमत है; उसी को खुदाई (प्रभुता) का हक़ हासिल है।

> "क्यों नहीं सजदा करते वे उस खुदा को जो आसमान और ज़मीन में छिपी हुई हर चीज़ को निकाल लाता है और जो कुछ तुम छिपाते हो और जो कुछ ज़ाहिर (प्रकट) करते हो उसको वह जानता है। वह खुदा है, उसके सिवा कोई पूज्य (माबूद) नहीं, वह अर्शे-अज़ीम अर्थात सर्वोच्च सिंहासन का स्वामी है।"
>
> (क़ुरआन, 27, 25,26)

आप कह सकते हैं कि आधुनिक युग का इंसान प्रकृति के प्रकट रूपों का पुजारी नहीं है, इसलिए आज यह आलोचना निरर्थक हो गई है, लेकिन यह बात पूरी तरह सही नहीं है। प्रकृति-पूजा से दुनिया आज भी नहीं निकल सकी है। भूतकाल में भी इसके दामन में इस पाप के दाग़-धब्बे लगे हैं और आज भी वह इससे साफ़-सुथरी नहीं है। इस्लाम ने इंसान को इस ज़िल्लत और नीचता से निकाला और कहा कि तुम सभी प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ हो। तुम्हारी इबादत और आज्ञापालन का हक़दार वह खुदा है जो हर चीज़ का सृजनहार है और जिसके हाथ में ज़मीन व आसमान की हुकूमत की बागडोर है। तुम्हें सिर्फ़ उसी एक

हस्ती के सामने नत-मस्तक होना चाहिए। तुम अज्ञानपूर्ण पक्षपात, राष्ट्रीय परम्पराओं, ज़िद और हठधर्मी की वजह से अकेले ख़ुदा की इबादत से इंकार करोगे तो अपना ही नुक़सान करोगे। तुम्हारे चारों तरफ़ और जगत के कोने-कोने में ख़ुदा के फ़रिश्ते रात-दिन उसकी पवित्रता और प्रशंसा के गुणगान में लीन हैं और उसकी महानता के गीत गा रहे हैं। ख़ुदा को सजदा करके तुम मुक़द्दस और पवित्र फ़रिश्तों का रास्ता अपनाओगे। ख़ुदा की सृष्टि के सामने सर झुकाना तुम्हारी महानता एवं श्रेष्ठता के विपरीत और तुम्हारी इंसानियत का अपमान है।

> "रात और दिन और सूरज और चांद ख़ुदा की निशानियों में से हैं। तुम सूरज और चांद को सजदा (नमस्कार) न करो और ख़ुदा को सजदा करो जिसने उनका सृजन किया है। अगर तुम उसी की इबादत करना चाहते हो। लेकिन अगर ये लोग अहंकार और घमंड की वजह से उससे इंकार करते हैं तो (ख़ुदा को कोई परवा नहीं है, इसलिए कि) तुम्हारे रब के समीपवर्ती फ़रिश्ते दिन-रात उसकी महानता का गुणगान कर रहे हैं और उससे नहीं उकताते।" (क़ुरआन, 41 : 37,38)

ऐ इंसान! तुझे हर सृष्टि और प्राणियों से श्रेष्ठ और उच्चतर पैदा किया गया है। तेरी महानता को कौन पा सकता है? ख़ुदा की सृष्टि को ख़ुदा मानकर अपनी महानता को कलंकित न कर! उसमें तेरी ज़िल्लत और अपमान है, इसलिए कि तू इससे बहुत उच्च है।

भविष्यवक्ताओं और पुरोहितों की ग़ुलामी

इतिहास बताता है कि इंसान ने अपने जैसे इंसानों को भी ख़ुदाई के पद पर बैठाया और विविध रूपों में उनकी पैरवी की। कभी तो कुछ

इंसानों ने उसके सामने अपने आपको ज्योतिषियों, भविष्यवक्ताओं, पुरोहितों और पुजारियों के रूप में पेश किया और उसने उनकी यह हैसियत इस तरह स्वीकार कर ली जैसे वे हर प्रमाण से परे हैं। उन्होंने कहा कि वे उसके उन अनगिनत ख़ुदाओं के प्रतिनिधि हैं, जो ज़मीन एवं आसमान में फैले हुए हैं। उसने उनके इस दावे की छानबीन की कोई ज़रूरत नहीं समझी और उसको पूरी श्रद्धा के साथ मान लिया। उसने उनसे अपनी मुश्किलों और विपत्तियों में राहनुमाई चाही, उनसे अपने ख़ुदाओं को ख़ुश करने के तरीक़े सीखे, पूजा और आराधना, दान-दक्षिणा और चढ़ावे तथा क़ुर्बानी के तरीके मालूम किए। अपना पूर्व-कर्म पूछा और भविष्य की जानकारी ली और सफलता तथा विफलता के परीक्षा-भेद मालूम किए। इसके जवाब में उन्होंने जो कुछ कहा उसको वास्तविकता का प्रकटिकरण समझा। जो हुक्म दिया उसको अपने ख़ुदाओं का हुक्म समझा और जिस चीज़ से मना किया उसे अपने ख़ुदाओं की तरफ़ से निषिद्ध ख़याल किया। उन्होंने जिन भ्रान्तियों और प्रपंचों की शिक्षा दी, उनको बिना तर्क-वितर्क किए उसने मान लिया और जिन फंदों में उसको जकड़ना चाहा, उनमें ख़ुशी से जकड़ लिया। इस तरह उसने उनको अपनी जान और माल पर स्वामित्व का पूरा-पूरा हक़ दे दिया। हालांकि यह हक़ सिर्फ़ सर्वोच्च ख़ुदा को मिलना चाहिए था। क़ुरआन मजीद ने इस अंधविश्वासपूर्ण आचरण के परिणाम से सावधान किया। उसने कहा कि तुम्हारे ये मार्गदर्शक तुम्हें रास्ते से भटका रहे हैं। अगर तुमने इन गुमराह करनेवालों से रिहाई न प्राप्त की और इनकी पैरवी और ग़ुलामी से निकलकर ख़ुदा की पैरवी की तरफ़ न पलटे तो वह दिन बहुत दूर नहीं है जबकि तुम्हें अपने बुरे परिणाम का ज़रूर सामना करना पड़ेगा। उस दिन तुम पछताओगे और बहुत पछताओगे और उन शैतान, जिन्नों और इंसानों को अपने पैरों से रौंद देना चाहोगे, जिन्होंने तुम्हें गुमराह किया। लेकिन उस समय तुम्हारा ग़म

व ग़ुस्सा कोई लाभ न देगा और तुम अपने अपराध की सज़ा पाकर रहोगे।

> "जिन लोगों ने कुफ़्र (अवज्ञा) किया वे (क़ियामत के दिन) कहेंगे, ऐ हमारे रब! उन जिन्नों और इंसानों को दिखा जिन्होंने हमें गुमराह किया। हम अपने पैरों से रौंद कर रख दें ताकि वे ज़लील और तुच्छ हो जाएँ।"
>
> (क़ुरआन, 41:29)

राजनीतिक ग़ुलामी

मनुष्य ने मनुष्य की दासता केवल धर्म के क्षेत्र में ही नहीं अपनाई, बल्कि राजनीति के क्षेत्र में भी उसको ग़ुलाम बनानेवालों ने ग़ुलाम बनाया। दुनिया ने इस तरह के फ़िरऔन बहुत देखे हैं, जिन्होंने हुकूमत एवं राज्य और धन-दौलत पाकर अपने ख़ुदा होने का दावा कर दिया और दूसरों को अपना बंदा और दास समझ बैठे। उनके इस झूठे दावे को स्वीकार करनेवालों ने स्वीकार भी किया और बंदे एवं ग़ुलाम बन कर उन के ख़ुदा बनने की इच्छा को बढ़ावा भी देते रहे, लेकिन इसके नतीजे में सिवाय लोक और परलोक की बरबादी के और कुछ नहीं प्राप्त कर सके।

> "उन्होंने फ़िरऔन के हुक्म की पैरवी की हालांकि फ़िरऔन का हुक्म दुरुस्त नहीं था। क़ियामत के दिन वह अपनी जाति के आगे-आगे होगा और उसको जहन्नम तक पहुँचाएगा। यह बहुत ही बुरा घाट है जहां उन्हें पहुंचाया गया है। इस दुनिया में भी उन पर फटकार पड़ी और क़ियामत में भी फटकार पड़ेगी। बहुत बुरा पुरस्कार है जो उनको दिया गया।"
>
> (क़ुरआन, 11 : 97-99)

इस दुनिया में ऐसे इंसानों की भी कमी नहीं रही है जिन्होंने किसी फ़िरऔन को ख़ुदा तो नहीं समझा, कभी-कभी उसके शासन को बोझ भी ख़याल करते रहे, लेकिन उसका इस तरह आज्ञापालन किया जिस तरह ख़ुदा का आज्ञा पालन किया जाता है। उसके हर हुक्म के अनुपालन को अनिवार्य समझा और उसकी प्रसन्नता पाने के लिए अपनी सारी क्षमताओं का इस्तेमाल कर लिया। हालांकि यह एक हक़ीक़त है, लेकिन बहुत कम लोग इस हक़ीक़त को महसूस कर पाते हैं कि ख़ुदा के एक शासनीय अधिकार के सिवा हर शासकीय अधिकार इंसान का शोषण करता है और बुरी तरह करता है। वह ख़ुदा की आज्ञा के अनुपालन से मुंह फेरकर जिस किसी को भी अपना शासक बनाता है वह उसे मात्र अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करता है। उसकी सारी ताक़तें और योग्यताएं ख़ुद उसके अपने काम नहीं आतीं बल्कि उसके काम आती हैं जिसकी वह पैरवी कर रहा है। इस दुनिया में चाहे उसको उसका एहसास हो या न हो लेकिन जब सांस के आने-जाने का क्रम रुक जाएगा और यहां के एक-एक अमल (कर्म) के फ़ैसले का दिन प्रकट होगा तो उसको मालूम होगा कि वह ख़ाली हाथ है और ज़िंदगी भर की ग़ुलामी का बदला उसको कुछ नहीं मिला है।

> "जिस दिन कि उनके चेहरे आग में उलट-पुलट किए जाएँगे, वे कहेंगे कि ऐ काश! हमने ख़ुदा की पैरवी की होती और ख़ुदा के रसूल की पैरवी की होती। वे कहेंगे कि ऐ हमारे रब! हमने अपने सरदारों और अपने बड़ों की बात मानी, उन्होंने हमें सीधे रास्ते से भटका दिया। ऐ हमारे रब! उनको दुगना अज़ाब (यातना) दे और उन पर बहुत बड़ी लानत (फटकार) कर।" (क़ुरआन, 33 : 66-68)

इतिहास में इस तरह की मिसालें भी पाई जाती हैं कि कुछ लोगों

ने दुनिया का शासन और सत्ता तथा प्रतिष्ठा एवं पद पाकर ख़ुदाई का दावा तो नहीं किया, बल्कि यदा कदा ख़ुदा को मानते भी रहे लेकिन दूसरों के साथ इस तरह मामला किया जैसे वे उनके शाश्वत शासक और संपूर्ण जगत के स्वामी हैं और उनके किसी भी अत्याचार या ज़ुल्म की कहीं पूछ-गछ न होगी। उन्होंने उनके साथ जानवरों से भी बदतर सुलूक किया, उनकी जान व माल और इज़्ज़त को पामाल और ध्वस्त करते रहे और ख़ुदा की ज़मीन को उपद्रव एवं अशांति से भर दिया। हालांकि ख़ुदा का हुक्म था—

> "ख़ुदा ने जो रोज़ी दी है, उसमें से खाओ और पियो
> और ज़मीन में उपद्रव न फैलाओ।" (क़ुरआन, 2 : 60)

इससे भी आश्चर्यजनक बात यह है कि उन अत्याचारियों के इस रवैये पर विरोध की आवाज़ बहुत कम सुनी गई और इंसानों की बड़ी संख्या ने उनके झूठे सत्ताधिकार को स्वीकार कर लिया और इस अपमान तथा तुच्छता को स्वेच्छा या अनिच्छा से सहन कर लिया और उनकी आज्ञा के अधीन रह कर ज़िंदगी गुज़ारी। बहुत-से इंसानों ने उनके सत्ताधिकार को इसलिए स्वीकार किया कि उनकी यातना का निशाना बनने से बचे रहें और उनकी कृपाओं के पात्र समझे जाएँ। यहाँ तक कि वे लोग भी जिनकी असाधारण योग्यताओं और शक्तियों को दुनिया ने स्वीकार किया है, उनकी सेवा और पैरवी को सौभाग्य समझ कर अपनी पूरी शक्ति उनके अत्याचार और दमनचक्र को फैलाने और मज़बूत बनाने में व्यय करते रहे। उनकी सबसे बड़ी तमन्ना और अभिलाषा यह रही कि प्रभुता के पद तक अगर वे नहीं पहुँच सके तो कम से कम उन प्रभुओं के क़रीब ही पहुँच जाएं। इसलिए उन्होंने हर वह तरीक़ा अपनाया जो संभव था और हर उस उपाय पर अमल किया जो उनके बस में था, चाहे वह सही हो या ग़लत, उचित हो या अनुचित।

वे ख़ुदा तआला के उन निर्देशों को भूल गए जो उसके नेक बंदों के ज़रीए हमेशा उन तक पहुँचते रहे।

> "हद से बढ़ जानेवालों का हुक्म न मानो जो कि ज़मीन में उपद्रव तो करते हैं लेकिन सुधार नहीं करते।" (क़ुरआन, 26 :151,152)

जाति एवं नस्ल और राष्ट्र की ग़ुलामी

आधुनिक युग ने रईसों और बादशाहों और बड़े-बड़े शक्तिशाली लोगों के विरुद्ध तो बग़ावत कर दी, लेकिन जाति एवं नस्ल और मातृभूमि को ख़ुदाई के पद पर बैठा दिया और बादशाहों तथा रईसों की पैरवी की जगह जाति तथा स्वदेश की ग़ुलामी में लग गया। हालांकि जिस तरह अनगिनत इंसानों पर एक इंसान का प्रभुत्व और सरदारी ग़लत है उसी तरह एक व्यक्ति पर बहुत-से इंसानों के प्रभुत्व की भी कोई दलील और प्रमाण नहीं है। कोई ग़लत काम इसलिए पुण्यकर्म बन जाए कि पूरा समूह मिलकर उसे अंजाम दे रहा है तो बहुत से ग़लत काम न सिर्फ़ यह कि दुरुस्त क़रार पाएंगे, बल्कि जिस ग़लत काम के पीछे जितना बड़ा समूह होगा वह उतना ही ज़्यादा सही और उचित ठहरेगा। हक़ीक़त यह है कि दुनिया के हर इंसान के लिए एक व्यक्ति की ग़ुलामी भी अनुचित है और क़ौम व राष्ट्र की ग़ुलामी भी। इनमें से किसी के पक्ष में कोई दलील या प्रमाण नहीं है। जो लोग और जातियाँ इंसान को ख़ुदा की पैरवी से विमुख करके अपनी इच्छाओं के अनुसार चलाना चाहती हैं वे ख़ुद भी सीधे मार्ग से भटकी हुई हैं और दूसरों को भी भटका रही हैं। इस वजह से क़ुरआन की हिदायत है—

> "उन लोगों की इच्छाओं की पैरवी न करो, जो इससे पहले ख़ुद भी पथ-भ्रष्ट हुए और दूसरे बहुत-से लोगों

> को भी पथ-भ्रष्ट किया और सीधे रास्ते से भटक गए।" (क़ुरआन 5 : 77)

अफ़सोस कि इंसान खुदा की ग़ुलामी से निकलकर बड़ी आसानी से अपने जैसे इंसानों की ग़ुलामी में चला जाता है। हांलाकि उसको सिर्फ़ खुदा की ग़ुलामी करनी चाहिए, इसलिए कि वही इस क़ाबिल है कि इंसान उसको अपना खुदा और शासक स्वीकार करे। ज़िंदगी भर उसकी इताअ़त और आज्ञापालन में लगा रहे और उसके इशारे पर अपना सब कुछ क़ुरबान करने के लिए तैयार हो जाए।

> "यह इसलिए कि खुदा ही की सत्ता सत्य है और उसके सिवा जिसको ये पुकारते हैं असत्य है और खुदा ही सर्वोच्च और सबसे महान है।" (क़ुरआन, 22 : 62)

मन और इच्छा की ग़ुलामी

इंसान के लिए कड़े से कड़े और अत्याचारी से अत्याचारी शासकों की ग़ुलामी के फंदे से मुक्त होना शायद आसान है, लेकिन अपनी इच्छा-शक्ति की ग़ुलामी की ज़ंजीरें तोड़ना आसान नहीं है। दूसरों की ग़ुलामी को वह कभी-कभी नफ़रत और घृणा के साथ ठुकरा देता है लेकिन अपने मन और उसकी इच्छाओं की ग़ुलामी का पट्टा इस खुशी से पहन लेता है जैसे वह उसी के लिए पैदा हुआ है। दूसरों के सत्ताधिकार के विरूद्ध कभी वह संघर्ष भी करता है, लेकिन अपने मन के सत्ताधिकार को इस प्रकार स्वीकार कर लेता है मानो वह इसका बड़ा फ़रमांबरदार है और उसके विरुद्ध कोई आवाज़ उसकी ज़बान से नहीं निकलती। इच्छा की ग़ुलामी उसको इतनी प्यारी होती है कि उससे निकलने की वह कल्पना भी करना नहीं चाहता और उसमें जितना अधिक लिप्त होता है उसे अपना उत्थान व तरक़्क़ी और पूर्णत्व समझने

लगता है। लेकिन यह एक सच्चाई है कि इच्छा की ग़ुलामी, इंसान को इंसान बाक़ी रहने नहीं देती और उसको अपने स्वभाव और चिन्तन तथा व्यवहार के लिहाज़ से पशुओं के स्तर पर पहुँचा देती है। एक पशु की तरह उसके नज़दीक अपनी भौतिक आवश्यकताओं से ज़्यादा महत्वपूर्ण कोई ज़रूरत नहीं होती, बल्कि वह उन आवश्यकताओं के सिवा किसी दूसरी ज़रूरत का एहसास भी मुश्किल ही से कर पाता है। उसमें और दूसरे पशुओं में यह अन्तर तो आप देखेंगे कि उसकी आवश्यकताओं की सूची उनकी ज़रूरतों से ज़्यादा लंबी होती है और वह उनको ज़्यादा बेहतर और ज़्यादा सुचारु रूप से पूरा करने की योग्यता रखता है, लेकिन दोनों की प्रकृति में कोई अन्तर नहीं महसूस करेंगे। वह आपको एक जैसी मालूम होंगी। एक पशु को अपनी रक्षा और राहत के सिवा किसी दूसरी चीज़ से दिलचस्पी नहीं होती और अपनी भौतिक ज़रूरतों को पूरा करने और वासनात्मक इच्छाओं की पूर्ति करने से उच्चतर कोई उद्देश्य उसके सामने नहीं होता। ठीक यही रवैया एक भौतिकवादी इंसान का होता है। भौतिक लाभ उसके दिल व दिमाग़ पर इस तरह छाए रहते हैं कि वह उन से हटकर किसी दूसरे विषय पर ध्यान देना भी नहीं चाहता। वह किसी चीज़ का महत्त्व और मूल्य उसी समय महसूस कर पाता है जबकि उसमें कोई भौतिक लाभ देखे और जिस चीज़ में भौतिक लाभ न हो उसके महत्त्व का समझना उसके लिए मुश्किल होता है। उसके निकट सत्य और असत्य का पैमाना मात्र भौतिक लाभ होते हैं। वह उन रास्तों की तरफ़ तो अंधाधुंध लपकता और दौड़ता है जो उन लाभों तक पहुँचाते हों, लेकिन ऐसे किसी रास्ते की तरफ़ उसके क़दम नहीं बढ़ते, जिसमें उसको किसी भौतिक लाभ की उम्मीद न हो या उससे किसी भौतिक लाभ को नुक़सान पहुँचने का ख़तरा हो। अपने हितों के लिए हर प्रतिबंध को तोड़ना और हर क़ानून को पांव तले रौंदना उसके लिए आसान होता

है। इसके लिए वह दूसरों के हितों को नज़रअंदाज़ कर सकता है और उन्हें नुक़सान भी पहुँचा सकता है। उसको किसी नियम-क़ानून का पाबन्द बनाना शायद दुनिया का सर्वाधिक कठिन काम है।

इसमें शक नहीं कि इंसान की भौतिक आवश्यकताओं से न तो इंकार किया जा सकता है और न उनका महत्त्व कम किया जा सकता है, लेकिन इसके साथ उस की रूहानी (आध्यात्मिक) और अख़लाक़ी (नैतिक) माँगों का इंकार भी सही न होगा। भोजन, वस्त्र, मकान, वासनात्मक तृप्ति और भौतिक सुख-चैन व राहत उसकी भौतिक ज़रूरतें हैं तो उसकी रूह (अंतरात्मा) की माँग यह है कि वह अपने सृष्टिकर्ता (ख़ालिक़) व मालिक को पहचाने, उसके सामने सर झुकाए, उसकी इबादत व आज्ञापालन करे और उसके आदेशों को पूरा करे। यह बहुत बड़ी ज़्यादती होगी कि इंसान रूह या आत्मा की इन माँगों को तो भुला दे और भौतिक ज़रूरतों ही को सब कुछ समझ बैठे। जबकि यह एक हक़ीक़त है कि इंसान की नैतिक और आध्यात्मिक आवश्यकताएं उसकी भौतिक आवश्यकताओं से ज़्यादा महत्त्व रखती हैं। उनके महत्त्व को नज़रअंदाज़ या उपेक्षित करके और उनको अधूरा छोड़कर इंसान इतना बड़ा नुक़सान उठाता है कि इससे बड़े नुक़सान की कल्पना नहीं की जा सकती।

> "उन से पूछो कि क्या हम तुम्हें उन लोगों के बारे में न बताएं जो अपने कर्मों की दृष्टि से सबसे ज़्यादा घाटा उठानेवाले हैं, ये वे लोग हैं जिन की सारी कोशिश इसी दुनिया में गुम होकर रह गई और वे इस ख़याल में गिरफ़्तार रहे कि वे बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। उन लोगों ने अपने रब की निशानियों का और उससे मिलने का इंकार किया तो उनके सारे कर्म अकारथ गए। अतः क़ियामत के दिन हम उनको कोई

> वज़न नहीं देंगे। यह है उनका बदला (अर्थात) जहन्नम। इस वजह से कि उन्होंने कुफ़्र किया और मेरी आयतों और मेरे रसूलों को मज़ाक़ का पात्र बना लिया।"
>
> (क़ुरआन, 18 : 103, 106)

क़ुरआन मजीद बार-बार इस हक़ीक़त की तरफ़ ध्यान दिलाता है कि इस दुनिया से आगे एक और दुनिया भी है, जिसका दुःख और सुख यहाँ के दुःख और सुख से और जिसका चैन व परेशानी, यहाँ की चैन व परेशानी से तीव्रतर है। ख़ुशी व ग़म की हर दशा यहां बहुत जल्दी ख़त्म हो जाती है, लेकिन वहाँ की ख़ुशी भी नष्ट न होनेवाली और वहाँ का ग़म भी हमेशा रहनेवाला है। क़ुरआन मजीद को अपने विरोधियों से यही शिकायत है कि वे इस दुनिया को और उसके ग़म व सुख-चैन और लाभ व हानि को देखते हैं, लेकिन उस हक़ीक़ी और वास्तविक तथा शाश्वत दुनिया से बेसुध हैं, जिस का आना उतना ही विश्वसनीय है जितना कि वर्तमान दुनिया का अस्तित्व विश्वसनीय है।

> "वे सांसारिक जीवन के प्रत्यक्ष को जानते हैं और आख़िरत से बेसुध हैं।" (क़ुरआन, 30 : 7)

इस दुनिया में किसी इंसान की सारी इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं, लेकिन इन इच्छाओं को पूरा करना ही अगर जीवन का उद्देश्य बन जाए तो इंसान इसी आरज़ू में जीता है कि उस की कोई एक इच्छा भी पूरी होने से न रह जाए और जब उसको अवसर मिलते हैं तो हर संभव तरीक़े से उसको पूरा करने की कोशिश करता है। इसके लिए कभी-कभी उसको ऐसे घिनौने और घटिया उपाय अपनाने में भी संकोच नहीं होता जिनकी एक शरीफ़ आदमी मुश्किल ही से कल्पना कर सकता है । अपनी भावनाओं की तृप्ति उसके नज़दीक वह आख़िरी मंज़िल होती है जहाँ वह पहुँचना चाहता है। वह उसको बहुत बड़ी सफलता समझता है कि उसकी किसी पाशविक भावना को थोड़ी देर ही के लिए सही सुकून

और संतोष मिल जाए। लेकिन ऐसी हर सफलता के बाद उससे यह आशा कम से कमतर होती चली जाती है कि वह ख़ुदा की तरफ़ पलटेगा और उसके आदेशों का पालनकर्त्ता होगा। जब ये सफलताएँ लगातार उसको मिलने लगती हैं और उसके चारों तरफ़ विलासिता व सुख का वातावरण छा जाता है तो यह हक़ीक़त उसकी निगाहों से ओझल हो जाती है कि वह ख़ुदा का बंदा है और उसकी बंदगी के सिवा कोई दूसरा रास्ता उसके लिए सही नहीं है।

> "जिन लोगों ने ज़ुल्म का रवैया अपनाया वे उस सुख-सामग्री के पीछे पड़े रहे जो प्रचुरता के साथ उनको दी गई थी।" (क़ुरआन, 11 : 116)

भौतिकवादी इंसान चाहता है कि वह इस दुनिया की लज़्ज़तों और आनंद में डूब जाए और कभी उससे न निकले। उसको ऐसी ज़िंदगी की तलाश होती है, जहाँ उसकी पाशविक इच्छाएँ लगातार पूरी होती रहें और बिना किसी रुकावट के होती रहें। वह हवस का बंदा बनकर उसी के चारों तरफ़ चक्कर काटता रहता है। क़ुरआन मजीद के नज़दीक इस तरह की ज़िंदगी का परिणाम जहन्नम है। जन्नत उन लोगों को मिलेगी जो अपनी इच्छाओं पर क़ाबू रखें और इस एहसास के साथ ज़िंदगी गुज़ारें कि एक दिन उन्हें ख़ुदा के सामने खड़े होकर अपने एक-एक कर्म का हिसाब देना है।

> "तो जिसने सरकशी या विद्रोह किया और सांसारिक जीवन को प्राथमिकता दी तो जहन्नम (नरक) उसका ठिकाना है, लेकिन जो व्यक्ति अपने रब के सामने खड़ा होने से डरा और अपने मन को इच्छाओं से रोके रखा तो जन्नत (स्वर्ग) उसका ठिकाना है।"
>
> (क़ुरआन, 79 : 37, 41)

भौतिकता का बोल-बाला

आज की मानसिकता, भौतिकता और उसकी शक्ति से इस तरह भयभीत है कि उसके लिए किसी अभौतिक हस्ती की कल्पना ही मुश्किल हो रही है। भौतिक तत्व ही उसके नज़दीक इस जगत का निर्माता है और उसी की शक्ति से यह जगत चल रहा है, हालांकि जो भौतिक तत्त्व ख़ुद अपने अस्तित्व के लिए ख़ुदा का मोहताज है, दूसरों को अस्तित्व में क्या ला सकता है? जिसके अन्दर ख़ुद जीने की क्षमता नहीं वह दूसरे को जीवन क्या प्रदान कर सकता है? जो ख़ुद हरकत नहीं कर सकता वह दूसरों को हरकत में कैसे ला सकता है? इंसान की यह कितनी बड़ी बदनसीबी है कि ख़ुद तो ज़िंदगी और चेतना की दौलत रखता है और अचेतन तथा निर्जीव तत्त्व को ख़ुदाई का पद दे कर उसके गुण गाता रहा है। वास्तविकता यह है कि ख़ुदा के अक़ीदे (धारणा) से वंचित होने के बाद इंसान को कोई चीज़ गिरावट से नहीं बचा सकती।

> "जिनको तुम ख़ुदा के सिवा पुकारते हो वे भी तुम्हारी ही तरह बंदे हैं। तो तुम उनको पुकारकर देखो। अगर तुम उनके बारे में अपने दावे में सच्चे हो तो उनको तुम्हारी पुकार का जवाब देना चाहिए। (बताओ) क्या उनके पैर हैं जिनसे वे चलें या उनके हाथ हैं जिनसे वे पकड़ें, या उनकी आँखें हैं जिनसे वे देखें या उनके कान हैं, जिनसे वे सुनें?" (क़ुरआन, 7 : 194, 195)

जगत स्वतः खण्डन करता है

इस जगत के बारे में सबसे ज़्यादा ग़लत बात जो कही जा सकती है वह यह है कि उसका कोई उद्देश्य नहीं है और वह बिना किसी

मक़सद और उद्देश्य के चल रहा है, लेकिन इस ग़लत बात को मानने पर हम मजबूर हैं अगर तत्त्व को इस जगत का स्रष्टा मान लें। क्योंकि उद्‌देश्य तय करना किसी चेतनशील हस्ती का काम है और जब तत्त्व चेतना ही से ख़ाली है तो वह उद्देश्य निर्धारित नहीं कर सकता। तत्त्व का काम अनैच्छिक होता है और उस काम के नतीजे में जो भी घटना घटित होती है वह तत्त्व के इरादे और संकल्प के बिना अस्तित्व में आती है। तत्त्व एक विवेकहीन शक्ति है। वह अपने अस्तित्त्व की चेतना से भी वंचित है तो किसी दूसरी चीज़ का एहसास क्या कर सकता है? तत्त्व, जगत का ख़ालिक़ (सृष्टिकर्ता) है तो इसका मतलब यह है कि जगत को किसी इरादे के तहत नहीं पैदा किया गया है, बल्कि वह आप से आप अस्तित्व में आ गया है। यह ऐसा निराला कारख़ाना है, जिस का कोई उद्देश्य नहीं है बल्कि वह बिना किसी उद्‌देश्य के अपना काम अंजाम दे रहा है। ख़ुदा के इंकार के बाद-जैसा कि क़ुरआन मजीद कहता है– जगत अपनी सार्थकता खो देता है और उसका कोई उद्देश्य नहीं रह जाता। ख़ुदा नहीं है तो हर चीज़ निरुद्देश्य और निरर्थक है। क्योंकि वह स्रोत ही नहीं है जिससे किसी चीज़ में सार्थकता पैदा होती है। ख़ुदा का इंकार करनेवाला क़ुरआन मजीद के नज़दीक जगत में हक़ (सत्यता) के अस्तित्व का इंकार करनेवाला है।

> "हमने आसमान और ज़मीन को और उन सारी चीज़ों को जो उनके बीच हैं बिना उद्देश्य के नहीं पैदा किया है। यह उन लोगों का ख़याल है जो ख़ुदा का इंकार करने वाले हैं। तो तबाही है ख़ुदा का इनकार करनेवालों के लिए कि वे जहन्नम में जाएंगे।"
>
> (क़ुरआन, 38 : 27)

जगत ख़ुदा के क़ानून के अधीन है

अगर आप इस निरर्थक बात को मानने के लिए तैयार नहीं हैं कि जगत सार्थकता से ख़ाली है तो वह कौन-सा उद्देश्य है, जिसके लिए यह

काम में व्यस्त है? इस सवाल का एक ही जवाब संभव है। वह यह कि जगत को जिस ख़ुदा ने पैदा किया। उसकी ग़ुलामी इसका उद्देश्य है। क्योंकि सृष्टि का उद्देश्य सृष्टिकर्ता की ग़ुलामी के सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता। यह जवाब ठीक-ठीक क़ुरआन मजीद के अनुकूल है। वह इसके सुबूत और प्रमाण में पूरे जगत को पेश करता है कि देखो जगत अपने ख़ालिक़ (सृष्टिकर्ता) के आदेशों का किस तरह पाबन्द है। उसको जिस काम पर लगा दिया गया है उसी पर लगा हुआ है। जगत का एक-एक कण उसके नियमों के बंधन में बंधा हुआ है। कोई घटना उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ नहीं होती।

> "आसमानों और ज़मीन में जितनी चीज़ें हैं सब उसी की संपत्ति हैं, हर चीज़ उसकी आज्ञा का पालन करती है।" (क़ुरआन, 30 : 26)

जब जगत ख़ुदा के आदेश के अधीन है और उसकी ग़ुलामी से मुँह नहीं मोड़ता तो इंसान को भी ख़ुदा ही का ग़ुलाम होना चाहिए। यह जगत जिस तरह ख़ुदा के सामने झुका हुआ है, उसी तरह उसको भी ख़ुदा के सामने झुक जाना चाहिए। अगर इंसान इसके लिए तैयार नहीं है तो वह जो भी रवैया अपनाएगा वह जगत के रवैये से समानुकूल और संतुलित न होगा और उसका रास्ता उस रास्ते से भिन्न होगा, जिस रास्ते पर यह विस्तृत और विशाल जगत चल रहा है।

> "क्या ख़ुदा के धर्म के सिवा ये कोई दूसरा धर्म ढूंढ़ते हैं हालांकि उसी के सामने झुक चुकी हैं वे सारी चीज़ें जो आसमानों और ज़मीन में हैं ख़ुशी से या विवशतापूर्वक और उसी की तरफ़ ये सब लौटाए जाएंगे।"
>
> (क़ुरआन, 3 : 83)

इंसान स्वतंत्र भी है और परतंत्र भी

इंसान की ज़िंदगी में आज़ादी है। उसको किसी ख़ास रास्ते का पाबंद नहीं बनाया गया है, बल्कि जो रास्ता अपेक्षित है उस के विपरीत काम करने की उसके अंदर शक्ति है। लेकिन यह आज़ादी इंसान को एक सीमित दायरे में हासिल है। इस सीमित दायरे से बाहर जगत में फैले हुए नियम-क़ानून उसके व्यक्तित्व पर शासन करते हैं। उसका अस्तित्व, जगत के अंशों से संयुक्त है। जगत की गति उसको बचपन से जवानी और जवानी से बुढ़ापे तक के विविध पड़ावों से गुज़ारती है। उसकी मौत एवं ज़िंदगी, जगत में क्रियाशील नियमों से स्वतंत्र नहीं है। यह स्थिति बताती है कि इंसान की आज़ाद ज़िंदगी को उस संप्रभुत्व सम्पन्न सत्ता के अधीन होना चाहिए जो पूरे विश्व पर आच्छादित है। क्योंकि वह इस जगत का एक अंश है। अंश का व्यवहार सम्पूर्ण के व्यवहार से भिन्न हो तो वह अपने व्यापार का ठीक-ठीक निर्वाह नहीं कर सकता। इंसान आज़ादी को छोड़ दे और ख़ुदा का ग़ुलाम बन जाए तो वह जगत का एक ऐसा अंश है जो अपने समग्र से पूरी तरह जुड़ा हुआ है, लेकिन अगर वह ख़ुदा की ग़ुलामी से इंकार करता है तो जगत की पूरी व्यवस्था से कट जाता है और जो चीज़ जगत-व्यवस्था से कट जाए वह कभी सफल नहीं हो सकती, क्योंकि यहाँ स्थिरता और सफलता उसी चीज़ के लिए है जिसकी रफ़्तार, जगत की रफ़्तार से मिलकर बिलकुल एक हो जाए।

> "और जो व्यक्ति इस्लाम (ख़ुदा की पैरवी) के सिवा कोई दूसरा धर्म चाहे तो वह उससे हरगिज़ स्वीकार न किया जाएगा और वह आख़िरत में घाटा उठानेवालों में होगा।"
>
> (क़ुरआन, 3 : 85)

इंसान को ज़िन्दगी के जिस हिस्से में आज़ादी मिली है, अफ़सोस कि वह उसे अपने बुरे व्यवहारों से नापाक कर रहा है और उसको इसका एहसास तक नहीं है। अगर उसकी रूप-रेखा विकृत हो जाए तो उस पर मौत की उदासी छा जाए, लेकिन उस का चरित्र लगातार विकृत हो रहा है और उसकी ज़िंदगी से इंसानियत का जौहर ख़त्म हो रहा है, लेकिन उसे इसका कोई ग़म नहीं है। वास्तविकता यह है कि इंसान अपना सही मक़ाम छोड़ चुका है और अत्यन्त भयानक अंजाम की तरफ़ बढ़ रहा है। खुदा से बग़ावत ने उसको मंज़िल से भटका दिया है और वह हक़ीक़त से बहुत दूर जा पड़ा है। वह एक राह से भटका हुआ मुसाफ़िर है, जिसके सामने मौत और तबाही के सिवा कुछ नहीं। नाफ़रमानी और अवज्ञा से उसकी ज़िंदगी फ़ितनों एवं दंगों से भर गई है और वह सुकून व चैन से महरूम है।

इंसान की वास्तविक स्थिति

इस जगत में इंसान की सबसे सही हैसियत यह है कि वह खुदा का ग़ुलाम है, इसलिए उसको ग़ुलाम ही होना चाहिए। इसके अलावा यहां उसकी कोई दूसरी हैसियत हो ही नहीं सकती। खुदा ने इंसान को आज़ादी इसलिए दी है कि वह ऊँचे से ऊँचे दर्जे तक पहुँच सके और उसकी तरक़्क़ी किसी एक हद पर रुक न जाए। इस आज़ादी के इस्तेमाल के लिए उसने सीमाएँ और नियम-क़ानून निर्धारित कर दिए हैं ताकि वह भटक न जाए। इंसान अपनी नादानी से उन सीमाओं की पाबंदी में अपने लिए नुक़्सान और तंगी महसूस करता है, हालांकि ये उसकी तरक़्क़ी की सीढ़ियाँ हैं। इन सीमाओं की पाबंदी से उसका व्यक्तित्व इस तरह उभरता और विकसित होता है जिस तरह ज़मीन से चिमटा हुआ पेड़ उभरता और विकसित होता है। इससे उसकी ख़ूबियां

निखरती और सँवरती हैं, उसके इरादे और हौसले बुलंद होते हैं, उस पर तरक़्क़ी की राहें खुलती हैं और वह पूर्णता की तरफ़ बढ़ने लगता है। खुदा इन सीमाओं के द्वारा इंसान को कोई सज़ा देना या मुसीबत में डालना नहीं चाहता लेकिन नादान इंसान इनको अज़ाब और यातना से कम नहीं समझता।

> "खुदा तुम पर तंगी करना नहीं चाहता बल्कि वह चाहता है कि तुमको पाक करे और अपनी नेमत को तुम पर पूरा कर दे, ताकि तुम उसका शुक्र अदा करो।" (क़ुरआन, 5, 6)

खुदा की ग़ुलामी इंसान की सफलता की गारंटी है। इंसान के लिए सबसे बड़ी श्रेष्ठता यह है कि उसका मस्तक खुदा के सामने झुक जाए और वह उसका बंदा बन कर रहे। इस से उसकी मान-मर्यादा बढ़ती है और उसको महानता और उच्चता प्राप्त होती है। खुदा की ग़ुलामी इंसान की बुलन्दी है और खुदा से बग़ावत उसको बुलंदी से निचले दर्जे में फेंक देती है। जगत की हर चीज़ अपना एक जीवन-लक्ष्य रखती है और अपनी कार्य-सीमा में उस उद्देश्य को पूरा कर रही है। ठीक इसी तरह इंसान खुदा की ग़ुलामी के लिए पैदा किया गया है। यह उसका जीवन-लक्ष्य है। अगर वह इस लक्ष्य से फिर जाए तो उसकी सफलता की कोई राह नहीं। खुदा की ग़ुलामी से इंकार के बाद इंसान की असल हैसियत बदल जाती है और किसी चीज़ की हैसियत का बदल जाना उसकी मौत है।

> "क्या तुमने नहीं देखा कि आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ें खुदा को सजदा करती हैं और सूरज और चांद और तारे और पहाड़ और बहुत-से इंसान भी उसको सजदा करते हैं और बहुत-से इंसान ऐसे हैं

जिन पर ख़ुदा का अज़ाब सिद्ध हो चुका है और (वास्तविकता यह है कि) जिसको ख़ुदा गिरावट में डाल दे उसे कोई सम्मान देने वाला नहीं है। निस्संदेह ख़ुदा जो चाहता है करता है।" (क़ुरआन, 22 : 18)

हक़ीक़त यह है कि ख़ुदा से बग़ावत करनेवाला इंसान अपने फ़ायदे और नुक़सान और भले-बुरे का फ़ैसला ख़ुद से करना चाहता है। वह अपने मन की ग़ुलामी में फ़ायदा देखता है तो उसका ग़ुलाम बन जाता है और जब दूसरों की इच्छाओं की पैरवी उसको लाभदायक मालूम होती है तो अपने ही हाथों से उन की ग़ुलामी का पट्टा और ज़ंजीर पहन लेता है हालांकि वह इस सम्बन्ध में किसी भी फ़ैसले का हक़ नहीं रखता। क्योंकि वह स्वतंत्र और आज़ाद नहीं है। वह इस ज़मीन पर अपनी मर्ज़ी से नहीं आया है, बल्कि ख़ुदा ने अपनी मर्ज़ी से उसको पैदा किया है। उसके शरीर के अन्दर और बाहर जो कुछ है सब ख़ुदा का है। जिस ज़बान से वह बोलता है, जिन आँखों से वह देखता है, जिन कानों से वह सुनता है, जिन हाथों से वह पकड़ता और चीज़ों को क़ाबू या नियंत्रण में लाता है और जिन पैरों से वह चलता है, उनमें से किसी भी चीज़ का वह मालिक नहीं है, बल्कि हर चीज़ ख़ुदा ने उसको दी है। फिर कैसे उसको यह हक़ व अधिकार मिल गया कि वह आज़ादी का दावा करे? यह न हो सकता है और न होना चाहिए कि जो ख़ुदा उसका ख़ालिक़ व मालिक है और जिसकी तरफ़ से उसको सारी नेमतें मिल रही हैं उसका तो उस पर कोई शासन न हो और वह अपनी मर्ज़ी का आप मालिक बन जाए।

बुद्धि का फ़ैसला

बुद्धि की स्पष्ट मांग है कि इंसान पर उसी हस्ती का हुक्म चलना चाहिए जिसने उसको पैदा किया है और जिसकी नेमतों में वह जी रहा

है और जिसका हर मामले में वह मोहताज और भिखारी है। दुनिया का कोई भी व्यक्ति या संस्था जिस व्यक्ति पर अपना रुपया-पैसा ख़र्च करती और उसके खाने-पीने का थोड़ा-बहुत प्रबंध करती है, वह अपने आपको उसके समयों का मालिक समझती है। वह चाहती है कि उसका कर्मचारी उसके और मात्र उसके आदेशों को पूरा करे और अपनी मनमानी न करे। उसकी इस मांग को अनुचित और ग़लत नहीं कहा जाता, बल्कि इसे उसका हक़ समझा जाता है। इसके विपरीत अगर कोई कर्मचारी अपने मालिक के आदेश की अवहेलना करे और अपने लिए आज़ादी का दावा करे तो उसके इस रवैये का समर्थन नहीं किया जाता।

जब एक कर्मचारी के लिए उचित आचरण यही है कि वह अपने मालिक का हुक्म माने और उसकी पैरवी करे, इसके अलावा कोई दूसरा रवैया उसके लिए सही नहीं है तो सोचिए, ख़ुदा की अवज्ञा इंसान के लिए कैसे उचित हो सकती है? जबकि उसने उसकी सभी वास्तविक ज़रूरतों की पूर्ति की और उसको इस योग्य बनाया कि वह अपनी आज़ाद मर्ज़ी से ज़मीन पर चल फिर सके। इंसान, स्वयं का मालिक नहीं है। इसलिए उसको अपने आप को प्रयोग में लाने का कोई हक़ भी नहीं है। अगर वह ख़ुदा की जगह किसी इंसान की या अपने मन की ग़ुलामी करता है तो इतना बड़ा ज़ुल्म करता है कि दुनिया की किसी भी अदालत में उसे माफ़ नहीं किया जाना चाहिए। लेकिन जब हर तरफ़ ज़ुल्म हो रहा हो तो इंसाफ़ कौन करे?

> "और उसने तुमको सब कुछ दिया जो तुमने माँगा और अगर तुम ख़ुदा की नेमतों (उपकारों) को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते। वास्तविकता यह है कि इंसान बड़ा ही ज़ालिम और नाशुक्रा (कृतघ्न) है।"
>
> (क़ुरआन, 14 : 34)

इतिहास की गवाही

इस युग में जिधर देखिए यह ज़ुल्म इतने बड़े और विस्तृत पैमाने पर हो रहा है कि इसके ज़ुल्म होने का एहसास तक बाक़ी नहीं है, बल्कि आज का इंसान इस ज़ुल्म और कृतघ्नता पर गौरवान्वित है और इसको अपनी बुलन्दी समझता है। इतिहास बताता है कि जिस रास्ते को उसने पसंद किया है वह हमेशा तबाही व बर्बादी लाता रहा है, लेकिन इतिहास के इस अनुभव के साथ वह लड़ रहा है। क़ुरआन मजीद ने उदाहरण दे-दे कर समझाया है कि जिन क़ौमों ने ख़ुदा की पैरवी से मुंह मोड़ा और उसके आदेश न माननेवालों और विद्रोहियों के इशारों पर ज़िंदगी गुज़ारी वे ध्वस्त हो गईं और आख़िरत (परलोक) में इससे ज़्यादा कठोर अज़ाब और यातनाओं की पात्र होंगी। आ़द की क़ौम इसका एक उदाहरण है।

> "और यह आ़द की क़ौम है जिसने अपने रब की निशानियों का इंकार किया और अपने रसूलों (ईश दूतों) की अवज्ञा की और हर सरकश और झगड़ालू के हुक्म की पैरवी की। इस दुनिया में भी उन पर फटकार लगाई गई और क़ियामत के दिन भी उन पर फिटकार पड़ेगी। सुन लो! आ़द की क़ौम ने अपने रब का इंकार किया सुन लो! फिटकार है आ़द पर जो हूद (पैग़म्बर) की क़ौम थी।" (क़ुरआन 11 : 59, 60)

ख़ुदा के दीन का पूरे तौर से पालन

इंसान की सही हैसियत यह है कि वह ख़ुदा का अधीनस्थ और ग़ुलाम है। उसे हर मामले में अल्लाह तआ़ला ही के आदेशों की पैरवी करनी चाहिए। जब वह उसकी पैरवी को छोड़कर किसी दूसरे की पैरवी

करता है तो अपनी उस हैसियत को ख़त्म कर देता है और ग़लत दिशा में चल पड़ता है। क़ुरआन उसकी इस हैसियत को याद दिलाता है–

> "पैरवी करो उस हिदायत की जो तुम्हारी तरफ़ तुम्हारे रब की ओर से उतारी गई है। उसके सिवा दूसरे संरक्षकों की पैरवी न करो। लेकिन बहुत कम तुम नसीहत हासिल करते हो।" (क़ुरआन, 7 : 3)

इस दुनिया में इंसान ने ज़िंदगी के बहुत सारे रास्ते ढूंढ निकाले हैं और विविध प्रकार के दीन-धर्म और जीवन व्यवस्थाएँ अपना ली हैं। हालांकि सिर्फ़ एक खुदा का उतारा हुआ दीन (जीवन-व्यवस्था) ही सच्चा दीन है। इसलिए कि वही सच्चे अर्थों में इंसान का अभिभावक और संरक्षक है। उसके सिवा इंसान के स्वनिर्मित संरक्षकों ने जितने भी धर्म बनाए हैं, उनमें से किसी की भी पैरवी उस के लिए सही नहीं है।

इंसान को यह हक़ किसी भी तरह हासिल नहीं है कि खुदा की तरफ़ से उसको जो दीन मिला है, उसके कुछ आदेशों को पैरवी के लिए चुन ले और कुछ को अनावश्यक और अव्यावहारिक समझकर रद्द कर दे, बल्कि उसको खुदा के एक-एक आदेश के सामने सर झुकाना होगा और उसकी तरफ़ से "जो कुछ अवतरित हुआ है" उसकी ठीक उसी तरह पैरवी करनी होगी, जिस तरह पैरवी का उसे हुक्म दिया गया है। इसका स्पष्टीकरण क़ुरआन मजीद ने एक जगह इस तरह किया है–

> "उस हिदायत की पैरवी करो जिस की 'वह्य' तुम पर की गई है, (क्योंकि) सिवाए उसके और कोई माबूद (पूज्य) नहीं है और बहुदेववादियों से मुंह फेर लो।"
> (क़ुरआन, 6 : 106)

यह इस पूरे दीन की पैरवी की मांग है जो खुदा ने 'वह्य' के द्वारा

नाज़िल किया है। उसकी वजह यह बताई गई है कि इंसान का वही एक माबूद (पूज्य) है और माबूद ही के आदेशों की पैरवी की जानी चाहिए। उसके सिवा कोई दूसरा इबादत और उपासना के योग्य ही नहीं है, इसलिए उसकी इबादत सही नहीं है।

ख़ुदा का यह दीन अपने अंदर बड़ी व्यापकता रखता है और पूरी ज़िंदगी पर फैला हुआ है। उसकी रहनुमाई और पथ-प्रदर्शन किसी एक क्षेत्र तक सीमित नहीं है बल्कि वह हर ऊँच-नीच, उतार-चढ़ाव में हमें सीधा रास्ता दिखाता है। उसकी शिक्षाओं ने सत्य असत्य और अच्छे-बुरे को एक दूसरे से बिलकुल अलग करके रख दिया है। रात-दिन इंसान ज़िंदगी की बहुत-सी समस्याओं से जूझता रहता है। उन सबके बारे में उसका अपना एक दृष्टिकोण है और उसी की रौशनी में वह उन सब को हल करता है।

> "क़ुरआन गढ़ा हुआ कलाम (वाणी) नहीं है बल्कि ठीक उन शिक्षाओं के अनुकूल है जो इससे पहले आ चुकी हैं और इसमें हर चीज़ की तफ़्सील (स्पष्टीकरण) है, और वह हिदायत (मार्गदर्शन) और रहमत (दयालुता) है उन लोगों के लिए जो इस पर ईमान रखते हैं।"
>
> (क़ुरआन 12 : 111)

एक और जगह कहा गया कि ख़ुदा की किताब ने पूरी तफ़्सील और विस्तार के साथ हिदायत का रास्ता स्पष्ट कर दिया है। इस में तुम्हारे हर मतभेद का फ़ैसला और हर विवाद का समाधान मौजूद है। फिर कोई व्यक्ति इसको छोड़कर किसी दूसरे से हिदायत व मार्गदर्शन की भीख क्यों मांगे और अपनी समस्याओं के समाधान के लिए उस की तरफ़ क्यों उन्मुख हो?

"क्या मैं ख़ुदा के सिवा कोई और फ़ैसला करने वाला तलाश करूँ, जबकि उसने तुम्हारी तरफ़ ऐसी किताब उतारी है जो सारे मामलों को खोल कर बयान करती है।" (क़ुरआन, 6 : 114)

ताग़ूत से विमुखता

इस्लाम इस धारणा का प्रबल विरोधी है कि पूजा और आराधना तो ख़ुदा की हो और उस से हटकर अपनी सारी व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं में दूसरे स्रोतों से मार्गदर्शन और रहनुमाई प्राप्त की जाए और वहाँ से जो मार्गदर्शन मिले उसका पालन ख़ुदा की हिदायतों की तरह किया जाए। उसके नज़दीक ख़ुदा की हुकूमत इंसान के किसी विशेष जीवन-क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि वह उसका सार्वभौमिक शासक और स्थायी सत्ता का अधिकारी है। इसलिए इंसान को सिर्फ़ कुछ मामलों में नहीं बल्कि अपनी पूरी ज़िंदगी में उसका आज्ञाकारी और ग़ुलाम होना चाहिए। नैतिकता हो या क़ानून, राजनीति हो या अर्थनीति, शिक्षा हो या संस्कृति और सभ्यता, हर मामले में उसके लिए सीधा व सच्चा रास्ता सिर्फ़ यही एक है कि वह ख़ुदा के आदेशों की पैरवी करे। ज़िंदगी के किसी भी क्षेत्र में वह उसकी हिदायतों से मुंह मोड़ता है तो यह उसकी सही और उचित हैसियत के विरुद्ध होगा और ख़ुदा के सामने उसकी जवाबदेही करनी पड़ेगी। दुनिया के सभी पैग़म्बरों (ईशदूतों) की यही शिक्षा थी। वे जब भी आए और जहाँ भी आए यही पैग़ाम ले कर आए कि इंसान यहाँ ख़ुदा का बंदा बन कर रहे। सिर्फ़ उसी की इबादत करे, ताग़ूत से दूर रहे। ख़ुदा को छोड़कर किसी उद्दण्ड और विद्रोही के पीछे न चले। पैग़म्बरों का यह पैग़ाम क़ौमों की क़िस्मत का फ़ैसला कर देता है। जिस क़ौम ने भी इसे ठुकराया, ख़ुदा का अज़ाब उस पर टूट पड़ा और वह अशुद्ध अक्षर की तरह धरती के पटल से मिटा दी गई।

> "हमने हर क़ौम में (अपना) रसूल (इसलिए) भेजा (ताकि वह इंसानों तक यह पैग़ाम पहुंचा दे) कि ख़ुदा की इबादत करो और ताग़ूत से बचो। इसके बाद उनमें से किसी को ख़ुदा ने हिदायत दी और कोई गुमराही और भटकाव ही में पड़ा रहा। तुम ज़मीन में चल-फिर कर देखो कि ख़ुदा की हिदायत के झुठलाने वालों का क्या परिणाम हुआ।" (क़ुरआन, 16 : 36)

ख़ुदा पर ईमान और विश्वास, उसकी इबादत व पैरवी और ताग़ूत से विमुखता, ज़िंदगी के लिए मज़बूत बुनियाद उपलब्ध करती है। उस पर जम जाना कामयाबी की ज़मानत है। यह वह जीवन का राज-मार्ग है, जो सीधे मंज़िल तक पहुंचाता है। इस पर चलकर भटकने और गुमराह होने का किसी भी स्थिति में कोई ख़तरा बाक़ी नहीं रहता।

> "दीन (धर्म) के बारे में किसी पर कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं है। हिदायत गुमराही से अलग बिलकुल स्पष्ट कर दी गई है। तो जो कोई ताग़ूत का इंकार करे और ख़ुदा पर ईमान ले आए, उसने एक ऐसी मज़बूत रस्सी पकड़ ली जो टूटनेवाली नहीं है। ख़ुदा सब कुछ सुनने और जानने वाला है। ख़ुदा संरक्षक मित्र है, ईमानवालों का। वह उनको अंधेरों से निकालकर प्रकाश में लाता है। जिन्होंने इंकार किया, उनके दोस्त ताग़ूत हैं। वे उन्हें प्रकाश से निकालकर अंधेरों में पहुँचाते हैं। ये जहन्नमवाले हैं, उसमें हमेशा रहेंगे।" (क़ुरआन, 2: 257)

यही प्रकाश है जो ख़ुदा के पैग़म्बरों के द्वारा दुनिया में फैलता है। यह प्रकाश ईमानवालों को नसीब होता है। उसके विपरीत एक शक्ति

ताग़ूत की है, जो अंधकार को आम करती है। ख़ुदा के इंकार के बाद इंसान उस ताग़ूत के झंडे के नीचे आ जाता है और दिन प्रतिदिन अंधेरे में डूबता चला जाता है। यह कितनी बदनसीबी और दुर्भाग्य है कि इंसान प्रकाश से भागे और अंधकार की चादर ओढ़ ले। नेमत भरी जन्नत (स्वर्ग) से वंचित हो जाए और जहन्नम (नरक) की यातनाओं का पात्र बन जाए।

ताग़ूत क्या है?

ताग़ूत क्या है, जिस का इंकार करने और उससे बचने का आदेश दिया गया है? 'ताग़ूत' शब्द उन सभी सरकश और उद्दण्ड शक्तियों के लिए बोला जाता है, जो इंसान को ख़ुदा की पैरवी से फेर देती हैं। इसमें वे जिन्न व इंसान रूपी शैतान भी सम्मिलित हैं जो ख़ुदा की इबादत और उपासना की जगह इंसानों से अपनी या दूसरों की बंदगी और उपासना कराते हैं। इसके अर्थ में वे निर्जीव और बेजान चीज़ें भी आ जाती हैं, जिनके अंदर ख़ुद तो दूसरों को गुमराह करने की ताक़त नहीं है, लेकिन विभिन्न कारणों से वे गुमराही का कारण बन जाती हैं। भले ही वे मिट्टी और पत्थर या किसी धातु के बने हुए बुत हों या सूरज, चांद, सितारे, समुद्र, पहाड़, पेड़ और फूल-पौधे या कोई भी दूसरी चीज़। ताग़ूत इंसान की वासनाओं और उसकी ग़लत भावनाओं और प्रवृत्तियों को भी कहा जा सकता है, इसलिए कि वे भी इंसान को ख़ुदा की पैरवी से विमुख करनेवाली हैं। इस्लाम की शिक्षा यह है कि इंसान इस तरह के सभी ताग़ूतों से दूर रहे और उनमें से किसी की पैरवी न करे। एक ख़ुदा का आदेश माने और उसी का बंदा बनकर रहे। इस्लाम की यह शिक्षा, इंसान की प्रकृति के ठीक अनुकूल है। अगर उसकी प्रकृति सही और शुद्ध है तो वह कभी इसका इंकार नहीं कर सकता। क़ुरआन मजीद के शब्दों में ख़ुदा ने इंसान से अपनी बंदगी की शपथ ले

रखी है और उस शपथ के बारे में क़ियामत (परलोक) के दिन उससे पूछ-गछ होगी।

> "ऐ आदम की औलाद! क्या मैंने तुमको यह बात नहीं बता दी थी कि तुम शैतान की इबादत और उपासना नहीं करोगे? निस्संदेह वह तुम्हारा खुला दुश्मन है और यह कि तुम मेरी इबादत करोगे, यही सीधा रास्ता है।" (क़ुरआन, 36 : 60,61)

इंसान अपने सजातीय लोगों से अलग-थलग नहीं रह सकता। उसको उनके साथ विविध प्रकार के सम्बन्ध रखने पड़ते हैं और मिल-जुल कर और आपस के सहयोग से ज़िंदगी गुज़ारनी होती है। वह छोटों को हिदायत देता और मार्ग बताता है, बड़ों और बुज़ुर्गों की बात मानता है। औलाद पर हुक्म चलाता है और मां-बाप का आज्ञापालन करता है। अधीनस्थों पर शासन करता है और शासकों के आदेशों को मानता है। ख़ुदा ने विस्तार से बताया है कि ये विभिन्न प्रकार के सम्बन्ध किस तरह रखे जाएँ। उसने शासन और पैरवी दोनों की सीमाएँ तय कर दी हैं और शासक तथा आदेश का पालन करनेवाले दोनों को उन का पाबंद बना दिया है। अब अगर शासक, अपनी जनता पर ख़ुदा के क़ानूनों के तहत शासन करता है, उन पर उसी के आदेश जारी करता है, उसी के बताए हुए रास्ते पर चलाता है, और उन सीमाओं तथा आचारों का पाबंद बनाता है, जो ख़ुदा के नज़दीक प्रिय हैं, तो यह हक़ीक़त में ख़ुदा का ही शासन होगा और वह उसे लागू कराने का मात्र एक साधन होगा। इसी तरह किसी व्यक्ति के आदेशों पर चलना प्रत्यक्ष रूप में उसकी पैरवी है, लेकिन अगर आदमी सिर्फ़ उन मामलों में उसकी पैरवी करता है, जिनमें पैरवी का ख़ुदा ने उसे आदेश दिया है

और उन मामलों में पैरवी नहीं करता, जिन में पैरवी का ख़ुदा ने आदेश नहीं दिया है, तो यह हक़ीक़त में ख़ुदा की पैरवी और उसके आदेशों का पालन होगा। इस का दूसरा पहलू यह है कि अगर आदमी अपने शासन और पैरवी में ख़ुदा की बताई हुई सीमाओं का पाबंद नहीं है और अपने मन-माने तरीक़े से ज़िंदगी गुज़ार रहा है, तो यह हक़ीक़त में शैतान और ताग़ूत की पैरवी और उसका शासन होगा। चाहे वह उसका अपना मन हो या उस जैसा कोई इंसान या गुमराही और पथ भ्रष्टता का कोई और साधन।